International Journal of Advanced Education and Research
ISSN: 2455-5746; Impact Factor: RJIF 5.34
Received: 14-12-2020; Accepted: 29-12-2020; Published: 23-01-2021
www.alleducationjournal.com
Volume 6; Issue 1; 2021; Page No. 37-40

विकासशील देशों में वैश्वीकरण का प्रभावः एक सिंहावलोकन

आदित्य कुमार
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
यद्यपि कि वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप देशों की समृद्धि बढ़ी है, देशों को आर्थिक लाभ हुआ है मगर वैश्विक आधार पर इसका वितरण प्रायः विषमतापूर्ण रहा है। विकासशील गरीब देश सापेक्षिक रूप से अधिक गरीब हुए हैं क्योंकि उनकी पूंजी, कच्चे माल एवं श्रम–शक्ति का प्रवाह प्रायः अमीर देशों के पक्ष में रहा है। वैश्वीकरण से जो भी लाभ प्राप्त हुआ उसका अधिकांश भाग अमीर देशों के हिस्से में गया है, जिसके परिणामस्वरूप विश्व व्यवस्था पर कुछ अमीर देशों का वर्चस्व स्थापित हो गया है। जिससे राज्यों की श्रेणी में उन्हें अभिजन राज्य की संज्ञा देना गलत न होगा। यदि हम व्यक्तिगत स्तर पर गरीबी की बात करें तो विश्व की तीन चौथाई जनसंख्या आज भी गरीब हैं, जिसमें अधिकांश भाग विकासशील देशों की जनसंख्या का है। वितरण की यह असमानता न केवल राज्यों के मध्य बल्कि राज्य की आन्तरिक सीमाओं में भी व्याप्त है। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हुई है, मगर प्रति व्यक्ति आय का अवलोकन गरीब व अमीर देशों के मध्य करें तो एक बड़ा अन्तर स्पष्टः दिखाई देता है। एक आंकड़े के अनुसार सन् 1820 में गरीब व अमीर देशों के प्रति व्यक्ति आय में अनुपात 1:7 का था जो सन् 1992 में बढ़कर 1:72 हो गया, जो यह स्पष्ट करता है कि वैश्वीकरण के लाभ से गरीब देश वंचित रहे हैं। वैश्वीकरण के विकास के साथ–साथ अत्याधुनिक हथियारों के निर्माण के परिणामस्वरूप विभिन्न समान हितों वाले राष्ट्र एकजुट हुए हैं। यद्यपि कि सामरिक दृष्टि से दो या अधिक राज्यों के मध्य सहयोग का इतिहास अधिक पुराना है तथापि इसका वृहद स्वरूप हमें बीसवीं सदी में दो महायुद्धों एवं शीत युद्ध के दौरान गठित सैन्य संगठनों जैसे नाटो, सीएटो आदि के अन्तर्गत दिखाई देता है। शीत युद्ध की समाप्ति एवं सोवियत संघ के विघटन तथा वैश्वीकरण ने सामरिक जुड़ाव का परिदृश्य ही पलट दिया है। वर्तमान में आसमान सामरिक हितों वाले देशों, परस्पर विरोधी देशों को एक ही मंच पर लाकर खड़ा कर दिया है।

मुख्य शब्दः वैश्विक, श्रम शक्ति, विश्व व्यवस्था, असमानता, अर्थव्यवस्था, विकासशील देश आदि।

प्रस्तावना
वैश्वीकरण आधुनिक युग की एक अवधारणा है, जिसके अन्तर्गत एक तरफ राष्ट्र राज्य की भूमिका कमजोर हुई है तो दूसरी तरफ विभिन्न गैर सरकारी संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, बहुर्राष्ट्रीय कंपनियों तथा निगमों आदि अभिकर्ताओं की भूमिका में निरन्तर वृद्धि हुई है। सैद्धांतिक रूप से वैश्वीकरण का विकास बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में माना जाता है। आज राज्यों की भौगोलिक सीमाओं का महत्व अत्यधिक सिमटता गया है, जिसे एक गांव की संज्ञा दी जा सकती है जिसके अन्तर्गत वस्तुओं, सेवाओं, आदि का बाधारहित संचरण होता है। इस आधार पर यह कहना समीचीन होगा कि अपने नैतिक एवं सर्वोत्कृष्ट रूप में वैश्वीकरण मानव समाज को व्यवस्थित करने के लिए युक्तिसंगत संकल्पना है। वैश्वीकरण से विश्व स्तर पर मानव जीवन के सभी आयाम प्रभावित हुए हैं। जैसा कि फ्रेडरिक जेंमशन वैश्वीकरण को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि 'वैश्वीकरण की अवधारणा वैश्विक संचारण की अभूतपूर्व वृद्धि के अर्थ में देखी जा सकती है। इसमें वैश्विक बाजार की असीमितता को भी लिया जा सकता है। ये दोनों बातें आधुनिकता के किसी भी चरण से अधिक प्रभावी हैं।' इस प्रकार वैश्वीकरण के सन्दर्भ में यह कहना समीचीन होगा कि वैश्वीकरण जुड़ाव की एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानव जीवन के समस्त पहलुओं को प्रभावित करती हैं परिणामतः वैश्वीकरण समूचे विश्व को एक दूसरे के निकट ला दिया है। दूसरे शब्दों में कहें तो लोगों के बीच की दूरियां मिट गई, समस्त मानव जीवन एक दूसरे से अन्तर्निर्भर व अन्तर्सम्बद्ध हो गया है।

वैश्वीकरण का प्रभाव
वैश्वीकरण के विकासशील देशों पर पड़ने वाले प्रभाव प्रायः इन देशों के लिए हितकारी नहीं रहे हैं। यद्यपि कि वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप देशों की समृद्धि बढ़ी है, देशों को आर्थिक लाभ हुआ है मगर वैश्विक आधार पर इसका वितरण प्रायः विषमतापूर्ण रहा है। विकासशील देशों के सामने विश्व व्यापार एक समस्या के रूप में है। विश्व व्यापार इनके लिए एक ऐसे दो–राहे के समान है कि यदि वे विश्व अर्थव्यवस्था से स्वयं को पृथक कर लें तो उनका विकास अवरूद्ध हो जाएगा, उनका अस्तित्व ही संकट में आ जाएगा तथा दूसरी तरफ यदि वे विश्व अर्थव्यवस्था से स्वयं को जोड़ें रखते हैं तो उन पर पड़ने वाला अन्तर्राष्ट्रीय दबाव उनके अर्थव्यवस्था के समक्ष संकट उत्पन्न करने लगता है। विभिन्न विकसित देशों द्वारा उन पर आयात निर्यात पर से प्रतिबंध हटा लेने का दबाव डाला जाता है। समस्या यह है कि यदि ये देश प्रतिबंध हटा लें तो उनके यहां विकसित देशों में उत्पादित वस्तुओं की अधिकता उनके घरेलू अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव डालती है; उनके घरेलू उत्पादों की मांग कम हो जाती है जिससे घरेलू उत्पादन के बंद पड़ जाने की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप विकासशील देशों को दोहरी मार का सामना करना पड़ता है। एक तरफ इन देशों में आन्तरिक उत्पादन के बंद पड़ जाने की स्थिति में बेरोजगारी में बेतहाशा वृद्धि की समस्या उत्पन्न हो जाती है तो दूसरी तरफ इन देशों की विदेशी मुद्रा भंडार पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। विकासशील देशों के लिए इससे उनकी सम्प्रभुता पर भी संकट उत्पन्न हो जाता है। विनिर्माण के माध्यम से चीन जिस गति से नेपाल में बढ़ रहा है उसमें डार्विनवाद की संकल्पना चरितार्थ होती प्रतीत होती है। चीनी साम्राज्यवादी नीतियॉ इसी ओर संकेत कर रही हैं।

'निर्बाध श्रम प्रवाह' वैश्वीकरण का एक प्रमुख आधार है। मगर इसका भी विकसित देशों द्वारा गलत उपयोग किया जाता रहा है। पहली समस्या तो 'श्रम प्रवाह' को सुगम बनाने की है क्योंकि

विकसित देश ऐसा स्वीकार नहीं करते। 'श्रम प्रवाह' के सन्दर्भ में दूसरी समस्या विकासशील देशों में 'मजदूरी' की है। विकसित देश 'सामाजिक एकरूपता एवं जुड़ाव' के नाम पर विकासशील देशों पर निरन्तर दबाव डालते हैं कि वह विश्व स्तर पर 'समान कार्य के बदले समान मजदूरी' को स्वीकार करें। दूसरे शब्दों में विकसित देशों का प्रयास यह है कि विकासशील देश अपने घरेलू अर्थव्यवस्था में श्रमिकों को वही मजदूरी दें जो 'मजदूरी' विकसित देशों में देय है। विकासशील देशों द्वारा वे ऐसा स्वीकार कर लिए जाने की स्थिति में उनके घरेलू उत्पादन की लागत में वृद्धि हो जाएगी तथा उन वस्तुओं की मांग की संभावना क्षीण हो जाएगी।

श्रम का निर्बाध प्रवाह अर्थात् 'लोगों के सुगम आवागमन' के परिणामस्वरुप सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि से सम्बंधित विभिन्न समस्याओं का जन्म हुआ है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरुप मानव तस्करी विशेषकर महिलाओं एवं बच्चों की तस्करी, हथियारों एवं नशीली दवाओं आदि की तस्करी में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। लोग अपने प्रवासन के साथ अपनी विचारधारा, रीति–रिवाज, संस्कृति आदि को भी साथ ले जाते हैं जिसके फलस्वरूप एक तरफ उनकी पहचान पर संकट उत्पन्न हो जाता है तो दूसरी तरफ उन्हें विभिन्न प्रकार के नस्ली भेदभाव का सामना करना पड़ता है।

वैश्वीकरण के कारण आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि नव–उपनिवेशवाद के प्रति आशंका को जन्म देती है। वर्तमान में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के प्रभाव ने इस आशंका को और अधिक बल दिया है। पाकिस्तान की चीन पर बढ़ती निर्भरता, अमेरिकी आर्थिक नीति आदि सभी हमारी आशंका के अनुरूप ही है कि कहीं चंद–विकसित देश विकासशील देशों को अपना उपनिवेश ना बना लें।

वस्तुओं एवं सेवाओं के सुगम प्रवाह एवं वैश्विक स्तर पर बन रही आर्थिक नीतियों का एक प्रमुख उद्देश्य है 'लोगों के जीवन को बिलासितापूर्ण बनाना'। लोगों को अधिक से अधिक उत्पादों को खरीदने के लिए प्रेरित करना, जिसके फलस्वरूप वर्तमान संस्कृति का एक ऐसा स्वरूप विकसित हुआ है जिसमें 'दिखावा' को प्रधानता मिली है। वस्तुओं का उपभोग, शक्तिवाद, प्रकृति विरोधी विकासवाद एवं दिखावा पर आधारित संस्कृति का जन्म हुआ। जिसे निसंदेह उपभोक्तावादी संस्कृति की संज्ञा दी जाती है। यह संस्कृति न केवल मानवता के आदर्शों बल्कि उसके अस्तित्व पर वज्रपात के समान है क्योंकि इससे उत्पन्न समस्याओं जैसे जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण क्षरण, प्रदूषण, वैश्विक तापन आदि का समय रहते निदान ना किया गया ये समस्याएं असाध्य हो सकती हैं।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत श्रम, पूँजी, वस्तु एवं सेवा का निर्बाध प्रवाह एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है। मगर विकसित देशों द्वारा श्रमिक वर्ग के निर्बाध प्रवाह को हतोत्साहित किए जाने के कारण वैश्वीकरण ने श्रमिकों को संगठित क्षेत्र से बाहर कर असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की फौज को बढ़ा दिया है। श्रमिकों की एक बड़ी फौज अर्थात् बेरोजगारी के बढ़ते स्तर के परिणामस्वरूप विकसित देशों में संरक्षणवाद की नीति के अवलम्बन पर बल दिया है, जिसके अन्तर्गत विभिन्न देशों द्वारा यह नीतियां बनाई गई कि स्थानीय कंपनियों एवं निगमों आदि में नौकरियॉ वहां के नागरिकों को ही मिलना चाहिए। उदाहरण के लिए सऊदी अरब में नितकत कानून–2011 लागू किया है जिसके अन्तर्गत यह प्रावधान है कि सऊदी अरब में कार्यरत सभी निजी कंपनियों में उसके कुल श्रमिकों का एक निश्चित अनुपात वहां के स्थानीय नागरिकों का होना चाहिए। जिसका परिणाम यह रहा है कि लगभग एक लाख भारतीय श्रमिकों को वापस आना पड़ा। ग्रेट ब्रिटेन के मजदूर संघ द्वारा ब्रिटिश नौकरियों में ब्रिटिश श्रमिकों के लिए आरक्षित किए जाने की मांग हो या फिर संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा विकासशील देशों को दिए जाने वाले आर्थिक सहायता के साथ अमेरिका में उत्पादित वस्तुओं को क्रय करने की अनिवार्य शर्त को आरोपित करना भी एक प्रकार का संरक्षणवाद ही है। निःसन्देह विभिन्न देशों द्वारा इस प्रकार की नीतियों के अवलम्बन के परिणामस्वरूप पृथकतावाद को बल मिला है।

संरक्षणवाद की यह नीति न केवल अंतर्राष्ट्रीय स्तर, बल्कि राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर भी देखे जा सकते हैं। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में श्रमिकों के प्रति विगत कुछ वर्षों में हुई हिंसात्मक घटनाएं संरक्षणवाद से ही प्रतीत होती है। जिसके परिणामस्वरूप बेरोजगारी, अनियतिकरण, निम्न मजदूरी, सुरक्षाविहीन नौकरियों की संख्या बहुत बढ़ गई है। संरक्षणवाद का एक अन्य दुष्प्रभाव अकुशल श्रमिकों की संख्या में निरंतर वृद्धि होना है क्योंकि मात्र स्थानीय श्रमिकों को नौकरियों में दिया जाने वाला आरक्षण प्रायः अकुशल श्रमिकों को आरक्षण प्रदान करता है जिसके कारण कई बड़े उद्योगों को घाटा का सामना करना पड़ा। यहां तक कि उनकी कई इकाइयां बंद कर देनी पड़ी। वैश्वीकरण के कारण उत्पन्न संरक्षण में बेरोजगारी को बढ़ावा देकर एक विशिष्ट प्रकार की समस्या को जन्म दिया है। इस सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार के वैश्वीकरण का कोई तुक नहीं है जो बच्चे के जूते की कीमत तो कम करे परन्तु उसके बाप की नौकरी छीन ले।

वैश्वीकरण से उत्पन्न समस्याओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण द्वारा विश्व में समानीकरण, बाजारवाद, पदार्थीकरण के विस्तार, संरक्षणवाद, एकीकरण आदि ने विकासशील देशों को विश्व अर्थव्यवस्था में लाभ प्राप्त करने, विकास करने आदि का 'अवसर' तो प्रदान किया मगर इस ने उस आधार को ही छीन लिया जिसके द्वारा विकासशील देश उन अवसरों का अपने हित में प्रयोग कर सकें। इस संदर्भ में ब्लाई यह प्रश्न करते हैं कि क्या वैश्वीकरण असफलताओं की उपलब्धि है? यहॉ एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वैश्वीकरण के लाभ एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया के सकारात्मक परिणाम की दिशा विकासशील देशों के पक्ष में कैसे हो? इस संदर्भ में प्रोफेसर योगेंद्र सिंह का कहना है कि वैश्वीकरण की स्वीकारोक्ति मूलतः वैश्वीकरण के प्रभाव को निर्धारित करती है, यह बात अवश्य है कि वैश्वीकरण के सांस्कृतिक प्रभाव स्थानीयता के आधार पर सीमित हैं; यह स्थानीय स्तर पर निर्भर है कि लोग क्या स्वीकार करते हैं क्या नहीं ?

विकासशील देशों पर वैश्वीकरण के पड़ने वाले प्रभाव को ध्यान में रखते हुए शबाना आजमी, मुल्क राज आनंद, रोमिला थापर, इरफान हबीब, आदि ने भारत को चेतावनी देते हुए अपने एक हस्ताक्षरित बयान में कहा है कि यदि बहुराष्ट्रीय निगमों को खुले तौर पर भारत में कार्य करने दिया गया तो महत्वपूर्ण आर्थिक मामलों, आंतरिक एवं बाह्य में निर्णय लेने की शक्ति, विकसित पूंजीवादी देशों के हाथों में चली जाएगी और उनका आधिपत्य स्थापित हो जाएगा। वैश्वीकरण ने विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को बाह्य धक्कों के प्रति कमजोर एवं असहाय बना दिया क्योंकि यह देश बाह्य असंतुलनओं का सामना करने लायक स्थिति में नहीं हैं ।

वैश्वीकरण के कारण जिस तरीके से विकसित देशों का विकासशील देशों में हस्तक्षेप बड़ा है उससे एक तरफ राजनीतिक एवं आर्थिक असंतुलन उत्पन्न हुआ है तथा निकट भविष्य में नव साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद की आशंका उत्पन्न होगी वहीं दूसरी तरफ विकासशील देशों का अस्तित्व ही ही संकटग्रस्त हुआ नजर आ रहा है ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि वैश्वीकरण को एक नए सिरे से परिभाषित कर विकासशील देशों के अनुरूप बनाया जाना चाहिए तथा विश्व व्यवस्था के अमरीकीकरण को अस्वीकार किया जाना चाहिए। अंततः अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा की गई एक टिप्पणी का उल्लेख

करना उचित होगा; जिसमें उल्लिखित है 'हमारी मुख्य चिंता यह है कि वैश्वीकरण से सभी देशों को लाभ प्राप्त होना चाहिए और सारी दुनिया में सभी लोगों के कल्याण में वृद्धि होनी चाहिए।' इसका अभिप्राय यह हुआ है कि इससे गरीब देशों के आर्थिक वृद्धि की दर में उन्नति होनी चाहिए, विश्व निर्धनता कम होनी चाहिए और इससे न तो असमानताएं बढ़नी चाहिए, न ही देशों के अन्दर सामाजार्थिक सुरक्षा को क्षति पहुंचने चाहिए।

हम भारत चीन सम्बन्ध पर वैश्वीकरण के प्रभाव की बात करें तो यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दोनों देशों के मध्य सामरिक जुड़ाव ही है कि एक तरफ परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह एवं संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की सदस्यता के लिए चीन के समर्थन की आवश्यकता है तो वहीं विश्व के प्रमुख विवादास्पद मुद्दों में से एक दक्षिण चीन सागर के मुद्दे पर चीन को भारतीय समर्थन की आवश्यकता है। मगर दोनों देशों के राष्ट्रीय हित दोनों देशों को एक दूसरे का विरोधी बना दिया है। इतना ही नहीं भारत–पाकिस्तान मुद्दे पर विगत कई वर्षों से चीन द्वारा भारत विरोधी नीति अपनाया जाता रहा है। विडम्बना यह है कि पारसपरिक अन्तर्विरोधों के बावजूद भारत एवं चीन ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन जैसे संगठनों के माध्यम से एक दूसरे के लिए अपने दरवाजे भर खोल रखे हैं। भारत और चीन के मध्य द्विपखीय व्यापार दोनों देशों के अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही हैं। यह वैश्वीकरण की प्रक्रिया की ही देन है कि विभिन्न विरोधी हितों के बावजूद दोनों देश न केवल आर्थिक एवं तकनीकी क्षेत्र बल्कि सामरिक क्षेत्र में भी परस्पर अन्तर्निर्भर हो गए हैं।

वैश्वीकरण से उत्पन्न समस्याओं का समाधान

वैश्वीकरण द्वारा विकासशील देशों के समक्ष उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए विभिन्न दृष्टिकोण किये जा सकते हैं जो निम्नलिखित हैंः–

वैश्वीकरण से उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए प्रथम् दृष्टिकोण के अन्तर्गत विकसित देशों के साथ–साथ विकासशील देशों को समृद्धि का समान अवसर प्रदान करना है। यदि विकासशील देशों को वैश्वीकरण का लाभ नहीं मिल पा रहा है तो इसका कारण स्वयं उन देशों की अपनी परिस्थितियां हैं ना कि वैश्वीकरण एवं उनकी प्रक्रिया। अतः वैश्वीकरण जैसा है उसे वैसे ही चलने देना चाहिए तथा समाधान उन परिस्थितियों में ढूंढना चाहिए जिसके कारण विकासशील देश वैश्वीकरण से उत्पन्न लाभ को प्राप्त करने से वंचित होते जा रहे हैं। द्वितीय, दृष्टिकोण के अन्तर्गत वैश्वीकरण के उद्भव के बाद उत्पन्न समस्याओं एवं आशंकाओं को ध्यान में रखते हुए यह माना जाता है कि वैश्वीकरण एक अवधारणा के रूप में लागू नहीं हो सका है क्योंकि व्यवहारिक रूप में यह बहुत खराब है इसीलिए इसे प्रचलन में रखना उचित नहीं है अतः वैश्वीकरण को व्यावहारिक प्रयोग से बाहर कर दिया जाना चाहिए। तृतीय दृष्टिकोण के लोगों का मानना है कि वैश्वीकरण को चलने देना चाहिए मगर इससे जो भी समस्याएं आ रही हैं पहले उसे अनिवार्यतः दूर किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत औचित्यपूर्ण वैश्वीकरण की प्रक्रिया में अवसर की समता स्थापित की जानी चाहिए जिससे सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी आदि क्षेत्रों में पिछड़े देशों एवं वर्गों को अधिक लाभ प्राप्त हो सके। जिसके लिए विभिन्न देशों को अपने राष्ट्रीय हितों के बजाय आम लोगों के हितों को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए। विकासशील देशों की एवं आम जनता की वैश्विक स्तर पर समृद्धि में अधिकाधिक भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए, जिसके लिए वैश्वीकरण को अधिक से अधिक 'मानवीय एवं समावेशी वैश्वीकरण' के रूप में परिवर्तित करने की आवश्यकता है। चतुर्थ दृष्टिकोण वैश्वीकरण की प्रक्रिया को दो वर्गों में विभाजित करते हैं, जिसमें प्रथम वर्ग 'ग्लोबलाइजेशन फ्रॉम एवव' का है जो पूंजीवाद, औद्योगीकरण, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को प्रमुखता देता है। दूसरे वर्ग के समर्थक 'ग्लोबलाइजेशन फ्रॉम एवव' का विरोध करते हैं तथा वैश्वीकरण का 'ग्लोबलाइजेशन फ्रॉम बिलो' का विचार प्रस्तुत करते हैं। इस दृष्टिकोण के समर्थकों में रेल्फ नाडार का नाम प्रमुख है जो अपने दृष्टिकोण को 'सार्वभौमवादी संरक्षणवाद' की संज्ञा देते हैं तथा विकासशील एवं विकसित देशों के मध्य सामंजस्य स्थापित करने की बात करते है। इस दृष्टिकोण के समर्थक जनआंदोलन, नव–सामाजिक आंदोलन, गैर सरकारी संगठनों की भूमिका को बल देते हैं। यह गरीब देशों एवं गरीब लोगों से संबंध होता है तथा उन्हें अधिक लाभ प्राप्त करने का अवसर प्रदान करता है। यह दृष्टिकोण पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार संरक्षण, महिला सशक्तिकरण, कार्य की उचित दशा, समान कार्य के लिए समान वेतन आदि को प्रोत्साहन देकर एक प्रकार से विश्व व्यवस्था को समावेशी विकास के लिए प्रोत्साहित करता है। पंचम् दृष्टिकोण पैट्रिक बुचानन एवं एच0 रास बैरट का है, जिन्होंने वैश्वीकरण से उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए विशेषीकृत संरक्षणवादी दृष्टिकोण दिए हैं। इसके अन्तर्गत यह माना जाता है की आर्थिक क्षेत्र में तो वैश्विक एवं बहुराष्ट्रीय संस्थाओं एवं संगठनों को तो स्थापित कर लिया गया मगर सामाजिक और राजनीतिक संस्थान स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्वरूप के ही रह गए हैं। इसके साथ–साथ विभिन्न संस्कृतियों पर पाश्चात्यीकरण का बढ़ता प्रभाव स्थानीय पहचान के प्रति संकट उत्पन्न कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में मात्र आर्थिक जुड़ाव विभिन्न कमजोर राष्ट्रों के समक्ष उनके स्वतंत्रता एवं अधिकार को चुनौती दे रहा है। इसलिए यह दृष्टिकोण स्वतंत्र व्यापार एवं वैश्विक निवेश का विरोध करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि वैश्वीकरण विभिन्न देशों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामरिक आदि क्षेत्रों में एक–दूसरे के निकट ला दिया है। वैश्विक स्तर पर प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हुई है, विभिन्न देशों के सकल घरेलू उत्पाद में तीव्र वृद्धि देखी गई है। वैश्वीकरण लोगों के जीवन स्तर में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। विभिन्न प्रकार के सेवाओं एवं बिलासितापूर्ण वस्तुओं को सामान्य जनता की पहुंच में ला दिया है मगर इन सभी क्षेत्रों में लाभ का प्रभाव विकासशील देशों के विपरीत है। इससे सृजित लाभ का एक बड़ा हिस्सा कुछ गिने–चुने विकसित देशों को प्राप्त हो रहा है। गरीब देशों को अपनी गरीबी, अशिक्षा, तकनीकी पिछड़ेपन आदि के कारण उत्पन्न विभिन्न समस्याओं जैसे भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, आर्थिक एवं मानसिक शोषण, तस्करी आदि का सामना करना पड़ रहा है, जिससे गरीब देश खुद को असहाय अनुभव कर रहे हैं। विकासशील देशों को नृजातीय संघर्ष, शहरी हिंसा, सामाजिक विघटन इत्यादि का मूल्य चुकाना पड़ रहा है। मगर स्टिग्लिस्ट्स का मानना है कि वैश्वीकरण एक अच्छी प्रक्रिया है, लेकिन अमीर राष्ट्रों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं के नियंत्रण और अपनी मनचाही नीतियों को मनवाने की सामर्थ्य होने के कारण इसका लाभ उतना समावेशी रूप से नहीं मिल पा रहा है जितना कि मिलना चाहिए। इस कारण अन्ततोगत्वा पश्चिम के अमीर राष्ट्रों को भी इसका मूल्य चुकाना पड़ेगा। इसके साथ–साथ वैश्वीकरण द्वारा उदीयमान तथाकथित साझी–संस्कृति ने विश्व स्तर पर सम्पूर्ण जीवन एवं गौरवशाली स्थानीय संस्कृति का उन्मूलन कर देगी, जिसमें उत्कृष्ट अनुकरणीय अच्छाइयां छुपी हुई हैं आवश्यकता इस बात की है कि सांस्कृतिक विविधता, स्वायत्तता

एवं मानवीय मूल्यों को स्वीकार करते हुए वैश्वीकरण को पुनः परिभाषित किया जाये।

संदर्भ सूची

1. भार्गव, नरेशः वैश्वीकरणः समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य, रावत बुक, जयपुर, 2014
2. जी0 पी0 एस0 पैनल ऑफ एक्सपर्टः वैश्वीकरण तथा पर्यावरण, गुलीबाबा पब्लिशिंग हाउस, 2012.
3. Joseph Stiglitz. Globalisation and its Discontents, W.W. Norton & Company, 2002.
4. Thomas Friedman. The World is Flat, Farrar, Straus and Giroux, 2005.
5. Martin Wolf. Why Globalisation Works, Yale University Press, 2004.
6. Jagdeesh Bhagwati: In Defance of Globalisation, 2004
7. Thr Hindu.
8. World Focus.
9. Economic and Political Weekly.